

1890

3

1890 G
77

222
222

3
12

29

1890G
77

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
पुस्तकालय



विषय संख्या २१३
पुस्तक संख्या ३६२
आगत पञ्जिका संख्या ३३, २४०

पुस्तक पर सर्व प्रकार की निशानियां
लगाना वर्जित है। कृपया १५ दिन से अधिक
समय तक पुस्तक अपने पास न रखें।

श्री भवानीप्रसाद जी

हलद्वीर (विजनीर) निवासी द्वारा पुस्तकालय गुरुकुल
कांगड़ी विश्वविद्यालय को सवा दो हजार पुस्तकें संप्रेष भेंट।

१० २१/१३

ग्रन्थालय

गुरुकुल कांगड़ी

रिपुल

५४०

१२-२५-२००१

सौन्दर्यलहरी ।

811
4-S

यलहरीनामकसमश्लोकी-

टीकया सहिता

CHECKED 1973



MTB...

श्लोकाब्दाः १८१२—सनाब्दाः १८९०.

मूल्यम् ४ आणकाः ।

विक्रीस तयार.

शिवलीलामृत.

किंमत १२ आणे-टपालहं० ३ आणे.

सर्व लोकांस विनयपूर्वक कळविण्यांत येतें कीं, थोडेंब-
हुत शिकलेल्या लोकांस व स्त्रियांसही वरील ग्रंथ वाच-
ण्याची उत्कंठा होत असते; परंतु ग्रंथांत शब्द वेगळे वे-
गळे नसल्यामुळे कोठें कोठें अर्थाचा अनर्थही होतो, तसा
अनर्थ न व्हावा ह्मणून शब्द वेगळे वेगळे तोडून आणि
कठिण शब्दांवर अर्थबोधक टीपा देऊन तो ग्रंथ आम्ही
मोठ्या टाईपांनीं जाड्या कागदांवर सुंदर चित्रांसह छाप-
िला आहे. हा ग्रंथ आपल्या घरांत फार वर्षे रहावा, व
वाचतांना डोळ्यांस त्रास पडूं नये आणि अर्थही चांगला
समजावा, अशी ज्यांस इच्छा असेल त्यांस हा ग्रंथ फार
सोईवार होणार आहे. हा ग्रंथ निर्णयसागर छापखान्यांत
विकत मिळेल.

जावजी दादाजी,

निर्णयसागर छापखान्याचे मालक.

हलक

फांगडी

COMPILED

३३,८४०
१६.३.६०

| | |
|--------------|-------------|
| क्र. १०४१/१३ | |
| पुस्तक | १०४१/१३ |
| श्री | श्रीगुरुदेव |
| श्री | श्रीगुरुदेव |
| श्रीगुरुदेव | |

सक माजीकरण १९८४-१९८५

COMPILED

लं चं

वई

म

याति

शोद

जगु

मन

रामवि

रुक्मि

वाल्म

जासव

विचा

वर्ण

वेदु

वेद

वेद

वेद

वेद

वेद

वेद

वेद

वेद

वेद

वेद

| | | |
|---|-----|-----|
| लांचें कल्याण | ६-॥ | ६॥ |
| वई युनिव्हर्सिटीचे संस्कृत म्याट्रिक्युलेशन पेपर व त्यांचीं उत्तरे सन् १८६२-१८८८ | २ | ६- |
| प्रातिराजाची कथा | ६- | ६॥ |
| शोदागीत | ६॥ | ६॥ |
| राजगुरु दादोजी कोंडदेव आणि छत्रपति शिवाजीमहाराज | १= | ६- |
| रामनवमी | ६- | ६॥ |
| रामविजयग्रंथ. (ओवीवद्ध) | ३ | ॥= |
| रुक्मिणीस्वयंवर रेशमी पुढ्याने बांधलेलें | ॥० | ६- |
| वाल्मीकि रामायणाचें मराठी भाषांतर | २० | १८= |
| जासवदत्ता कथासार | ६- | ६॥ |
| विचारसाधन | ॥० | ६॥ |
| वैष्णुवावा ब्रह्मचारीकृत वेदोक्तधर्मविचार | १= | ६॥ |
| वेदुरवचन | ६= | ६॥ |
| वेद्यार्थी | ६-॥ | ६॥ |
| त्रेवेद्यार्थ्यांचा व्याकरणमित्र | ६-॥ | ६॥ |
| तत्रैयुक्तदंपती प्रहसन | ॥० | ६॥ |
| तानंदराव | ६= | ६॥ |
| तार्यवृत्त | ६- | ६॥ |
| तारत्या.—भाग पहिला | ६॥ | ६॥ |
| तालफेद धि प्रेत ह्याचें चरित्र | १० | ६- |
| तमजी सुरस रत्नमाला | ॥= | ६- |
| तद्रियमहत्त्वविचार | ॥० | ६- |
| हाण्या | ६= | ६॥ |

| | | | | कि० | ट० |
|---|-----|-----|-----|-----|----|
| कालिदासकविविरचित रघुवंशनामक महाकाव्य | ... | ... | ... | २ | ८३ |
| मराठी पद्यात्मक भाषांतर | ... | ... | ... | २ | ८३ |
| कादम्बरी कथासार | ... | ... | ... | ८३ | ८१ |
| कृष्णाकुमारी काव्य | ... | ... | ... | ११ | ८१ |
| गरुडपुराण | ... | ... | ... | ११ | ८१ |
| गीतापद्यमुक्ताहार | ... | ... | ... | २ | ८१ |
| गृहवैद्य | ... | ... | ... | १११ | ८१ |
| चमत्कारीक नाटक | ... | ... | ... | १११ | ८१ |
| छत्रपति संभाजीमहाराज | ... | ... | ... | ११ | ८१ |
| जन्माष्टमी | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| तुकारामाचे स्वर्गारोहणाचे अभंग | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| तुकारामाष्टक | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| दामाजीपंताचें चरित्र | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| दारुची लावणी | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| दिनार्चस. | ... | ... | ... | १११ | ८१ |
| दिवाळी | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| दुःखिताश्रुमार्जन | ... | ... | ... | ८३ | ८१ |
| देहावरनिराकारी अभंग | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| देवीमाहात्म्य. (सप्तश० प्रा० ओ० टीका.) | ... | ... | ... | ११ | ८१ |
| द्रौपदीहरण | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| धर्मसिंधु. (संस्कृत मूळ व मराठी भाषांतर.) | ... | ... | ... | ६ | ८१ |
| धर्मराजद्रौपदीसंवाद | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| ध्रुवाख्यान | ... | ... | ... | ८१ | ८१ |
| नलदमयंतीचरित्र | ... | ... | ... | ११ | ८१ |
| शिवलिलामृत मोठें | ... | ... | ... | १११ | ८१ |

॥ श्रीः ॥

श्रीमच्छंकराचार्यविरचिता सौन्दर्यलहरी ।

कविवर पोळ इत्युपाह्व श्रीमद्भोविन्दपण्डित-
विरचितया

सौख्यलहरी

व्याख्यया सम्यक्संवलिता.

इयं च

मुंढय्यां निर्णयसागराधिपतिना स्वीयेऽङ्कनालये
मुद्रयित्वा प्रकाशिता.

शकाब्दाः १८१२—सनाब्दाः १८९०.

मूल्यम् ४ आणकाः ।

R546,SN2C V 2



1890

| | | |
|------------------------|-----------------|---|
| ● ऋते ज्ञानास भक्तिः ● | | |
| 卐 | पुस्तक सं०..... | 卐 |
| | आगत सं०..... | |
| | तिथि०..... | |
| गुरुकुल प्रकाशन कपिडी. | | |

(Registered according to Act XXV of 1867.)

(All rights reserved by the publisher.)

प्रस्तावना.

कविश्रेष्ठ श्रीमच्छंकराचार्य यांनीं केलेले असंख्य ग्रंथ मुद्रणसाहाय्यानें आजकाल छापून प्रसिद्ध होऊन सर्व श्लोकांच्या पुढें आले आहेत; त्यांवरून त्यांच्या काव्याची मोठी, माधुर्य आणि सरळता इत्यादिक गुण सर्वमान्य व नेविवाद आहेत. त्यांचीं स्तोत्रें लहानशींच असून तीं ठेकठिकाणीं पदलालित्य, छंद, अलंकारादिकांनीं ओतप्रोत भरलीं आहेत. यांचीं स्तोत्रें पुण्यकारक आहेत ह्मणून सर्व लोक आदरपूर्वक अतिप्रेमानें तीं पठण करितात. त्यांनीं केलेलें, जगदंबा भवानीची स्तुतिगर्भित सौंदर्यलहरी नामक स्तोत्र, फार प्रसिद्ध आहे व यावर टीकाही बऱ्याच उपलब्ध आहेत; तथापि हाछीं आह्माला यावरची सौख्यलहरी नामक समश्लोकी टीका आमचे एका मित्रानें पाठवून दिली. ती शके १६१६ मध्ये पिंपळगांवीं राहणारे कविवर गोविंदपंडित यांनीं केलेली आहे. हेच्यावरून दुर्बोध संस्कृत श्लोकांचा अर्थ सर्वांच्या लक्षांत सहज येण्यासारखा आहे. यामध्ये संस्कृत श्लोकांचीं पाठांतरेही दिलीं आहेत. यांत शोधनसमयीं स्थलविशेषीं कदाचित् दोष जाहाले असतील ते गुणग्राही सदय विद्वान् नमा करून या ग्रंथाचा आदर करतील अशी आशा आहे.

अं
वं
जे
ली
त
त
त
अ
अ
अ
अ
अ

श्रीः सौन्दर्यलहरी ।

सौख्यलहर्याख्यसमश्लोक्या संवलिता ।

श्रीमद्विघ्नपशारदागुरुकुलां वंदूनियां आपुली
वंशीं जे कुलदेवता रतिभरें ते रेणुका प्रार्थिली ।
जे सौंदर्यतरंगिणी विरचिली श्रीशंकराचार्यकें
श्रीचा प्राकृतभाव सौख्यलहरी श्रीचंडिके आयकें ॥

शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं
चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।
तस्त्वामाराध्यां हरिहरविरिञ्चयादिभिरपि
गन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति ॥ १ ॥

असे ज्याला शक्तीयुत ह्मणुं शिवावीर्य विलसे
तव्हे ऐसें तेव्हां तनुचलनसामर्थ्यहि नसे ।
अशी जे तूं वंद्या विधिहरिहराद्यांसि सुतनु
तये ते वंदीजे स्तविल सुकृतावीण कवणूं ॥ १ ॥

तनीयांसं पांसुं तव चरणपङ्केरुहभवं
 विरञ्चिः संचिन्वन्विरचयति लोकानविकलम् ।
 बहत्वेनं शौरिः कथमपि सहस्रेण शिरसां
 हरः संक्षुभ्यैनं भजति भसितोज्ज्वलनविधिम् ॥ २ ॥

भवानि त्वत्पादांबुजरज बहू सूक्ष्म अनघे
 विरंची जो पाहे तव रचितसे लोक अवघे ।
 महाकष्टे शौरी दशशतशिरीं त्यासि धरितो
 विलेपी सर्वांगा विभुतिरज जाळूनि हरतो ॥ २ ॥

अविद्यानामन्तस्तिमिरमिहिरोद्दीपनकरी
 जडानां चैतन्यस्तवकमकरन्दश्रुतिशिरा ।
 दरिद्राणां चिन्तामणिगुणनिका जन्मजलधौ
 निमग्नानां दंष्ट्रा मुररिपुवराहस्य भवती ॥ ३ ॥

अविद्यांचे अंतीं तिमिर रविरूपेंच हरिसी
 जडांचें चैतन्यस्तवकरज त्यां पाझरविसी ।
 दरिद्रांला चिंतामणिविमळमाळारूप खरी
 भवाब्धीमध्ये जे बुडतिल तयां दाढ सुकरी ॥ ३ ॥

(१) 'दष्ट्रा' इति पाठः.

मु
म
र । इत्यः पाणिभ्यामभयवरदो दैवतगण-
मेका नौकासि प्रकटितकरा भीत्यभिनयाम् ।
गुण्यं तु फलमपि च वाञ्छासमधिकं
॥ २ ॥ अथ कानां तव हि चरणावेव निपणौ ॥ ३ ॥

विषय संख्या ८१३ आ.सं.
लेखक ३६२ ३३/२४०
आख्या

४ ॥

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

[१]

19 JAN 1981

मू ॥ ५ ॥

८१३/६

26 NOV 1983

K २५६/६४७

९ ॥

तनीयांसं पांसुं तव चरणपङ्केरुहभवं
 विरञ्चिः संचिन्वन्विरचयति लोकानविकलम् ।
 वहत्येनं शौरिः कथमपि सहस्रेण शिरसा
 हरः संक्षुभ्यैनं भजति भसितोद्भूलनविधिम् ॥ २

धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी पञ्च विशिखा
 वसन्तः सामन्तो मलयमरुदायोधनरथः ।
 तथाप्येकः सर्वं हिमगिरिसुते कामपि कृपा-
 मपाङ्गात्ते लब्ध्वा जगदिदमनङ्गो विजयते ॥ ६ ॥

धनू तें पुष्पांचें सितमधुकरी पांच शरही
 वसंततू ज्याचा सचिव मलयानील रथही ।
 असा हा एकाकी हिमगिरिसुते अंगहि नसे
 कृपापांगें तूझ्या मदन जग तो जिंकित असे ॥ ६ ॥

क्वणत्काञ्चीदामा करिकलभकुम्भस्तनभरा
 परिक्षीणा मध्ये परिणतशरच्चन्द्रवदना ।
 धनुर्बाणान्पाशं सृणिमपि दधाना करतलैः
 पुरस्तादास्तां नः पुरमथितुराहोपुरुषिका ॥ ७ ॥

कटीं कांची वाजे करिकलभकुम्भस्तन तसे
 कृशा जे कीं माजी मुख वरद पूर्णेंदुसमसे ।
 धरी हस्तीं जेकीं धनुविशिखपाशांकुश निका
 पुढें राहो ऐसी त्रिपुरहरआहोपुरुषिका ॥ ७ ॥

वासिन्धोर्मध्ये सुरविटपिवाटीपरिवृते
 द्वीपे नीपोपवनवति चिन्तामणिगृहे ।
 धाकारे मञ्चे परमशिवपर्यङ्कनिलयां
 ॥ ६ ॥ अन्ति त्वां धन्याः कतिचन चिदानन्दलहरीम् ८

ध्यासिंधूपोटीं सुरविटपवार्गीं परिकरीं
 द्वीपीं नीपोपवनिं सुरचिन्तामणि घरीं ।
 धाकारिं मञ्चीं वससि हि चिदानन्दलहरी
 ६ ॥ मसी जेजे ध्याती कितिक जन ते धन्य कुमरी ॥ ८ ॥

मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहं
 ति स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि ।
 ऽपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्त्वा कुलपथं
 सारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसे ॥ ९ ॥

७ ॥ मूलाधारीं उदकमणिपूरांत अनळा
 ति स्वाधिष्ठानीं हृदि मरुत आकाशहि गळां ।
 से भ्रूमध्ये तें मन कुलपथा भेदुनि शिवे
 हस्तापत्रांकीं कमळिं सुख घेसी पतिसर्वें ॥ ९ ॥

(१) ' जित्वा ' इति पाठः.

सुधाधारासारैश्चरणयुगलान्तर्विगलितैः
 प्रपञ्चं सिञ्चन्ती पुनरपि रसाम्नायमहसा ।
 अवाप्य स्वां भूमिं भुजगनिभमध्युष्टवलयं
 स्वमात्मानं कृत्वा स्वपिपि कुलकुण्डे कुहरिणि ॥ १० ॥

सुधाधाराविंदू चरणयुगलांतून गळती
 प्रपंचा सिंचोनी पुनरपि स्वतेजेंचि निगुती ।
 निजस्था नागांहीं भुजगवलयंती न करिसी
 स्वदेहाची तेथें जननि कुलकुंडींच निजसी ॥ १० ॥

चतुर्भिः श्रीकण्ठैः शिवयुवतिभिः पञ्चभिरिति
 प्रभिन्नाभिः शंभोर्नवभिरपि मूलप्रकृतिभिः ।
 त्रयश्चत्वारिंशद्वसुदलकला स्त्रीति वलयं
 त्रिरेखाभिः सार्धं तव चरणकोणाः परिणताः ॥ ११ ॥

चहूं श्रीकंठांहीं गिरिशवनिता पांच मिळुनी
 शिवाच्या ह्या मूलप्रकृति नव आदीक करुनी ।
 तिहेतालीसासैं वसु दळ पुढें षोडशदळें
 तिन्ही वृत्ता रेखात्रयमिळुन हें चक्र वडलें ॥ ११ ॥

(१) ' भिरिति ' इति पाठः. (२) ' चतुश्चत्वारिंशद्वसुदलकला
 त्रयवलय ' इति पाठः.

येयं सौन्दर्यं तुहिनगिरिकन्ये तुलयितुं
 इन्द्राः कल्पन्ते कथमपि विरिञ्चिप्रभृतयः ।
 लोकोत्सुक्यादमरललना यान्ति मनसा
 भिर्दुःप्रापामपि गिरिशसायुज्यपदवीम् ॥ १२ ॥

ये सौंदर्याची अचुक तुळणा जाण जगतीं
 महाकष्टें चित्तीं विधिमुख कवी तर्क करिती ।
 तयातें पाहोनी अमरललना सादरमते
 भीं जे दुःप्रापा गिरिशपदवी पाववि तितें ॥ १२ ॥

रं वर्षीयांसं नयनविरसं नर्मसु जडं
 वापाङ्गं लोके पतितमनुधावन्ति शतशः ।
 लद्वेणीबन्धाः कुचकलशविस्त्रस्तसिचया
 ठात्रुद्यत्काञ्च्यो विगलितदुकूला युवतयः ॥ १३ ॥

कुरूपी ह्यातारा अतिशिथिल जो मूर्ख अडला
 तुझ्या नेत्रापांगीं जर नर असा जाण पडला ।
 तयामागें जाती गलितकवरीभार रमणी
 हठात्कारें कांची विगलितदुकूला सुरमणी ॥ १३ ॥

दलक

क्षितौ षट्पञ्चाशद्विसमधिकपञ्चाशदुदके
हुताशे द्वाषष्टिश्चतुरधिकपञ्चाशदनिले ।
दिवि द्विःषट्त्रिंशन्मनसि च चतुःषष्टिरिति ये
मयूखास्तेषामप्युपरि तव पादाम्बुजयुगम् ॥ १७ ॥

महीमध्ये छप्पन्नदकिं तारि बावन्न असती
हुताशीं वाषष्टी चउपन समीरांत वसती ।
बहात्री आकाशीं चउसटि मनामाजि किरणें
तयाहूनी वर्ती भगवति तुङ्गीं दोनि चरणें ॥ १४ ॥

शरज्ज्योत्स्नाशुद्धां शशियुतजटाजूटमुकुटां
वरत्रासत्राणस्फटिकगुटिकापुस्तकधराम् ।
सकृन्नत्वा तु त्वां कथमपि सतां संनिदधते
मधुक्षीरद्राक्षामधुरिमधुरीणा भणितयः ॥ १५ ॥

शरज्ज्योत्स्नाकांती मुकुटिं शशि तेजें धरितसे
स्फटीकांची माळा अमयकर पोथी करिं असे ।
इला एकया वेळे नमन न करीजे मग कसें
मधुक्षीरद्राक्षा मधुरसम वाणी वदतसे ॥ १५ ॥

(१) ' शुभ्रां ' इति पाठः. (२) ' नत्वां कथमिव ' इति पाठः.

विक्रीस तयार.

प्राकृत.

| | | | | किं० | ट० |
|------|---|-----|-----|------|----------|
| ६ | शकुंतलाचरित्र | ... | ... | ... | ८- ८॥ |
| | शिवलीलामृत. रेशमी | ... | ... | ... | ११० ८-॥ |
| | श्रीएकनाथचरित्र | ... | ... | ... | १११० ८= |
| | श्रीमंत पहिले वाजीराव बल्लाळ पेशवे यांचें चरित्र | ... | ... | ... | १११० ८= |
| | श्रीज्ञानेश्वरचरित्र | ... | ... | ... | १११० ८= |
| | सवाई माधवरावसाहेब | ... | ... | ... | ८= ८॥ |
| ॥ | सदाचार | ... | ... | ... | ११ ८= |
| | सद्वर्तन | ... | ... | ... | १११० ८-॥ |
| | साहा सुलभ संवाद... | ... | ... | ... | ८- ८॥ |
| | साम्युएल जान्सन | ... | ... | ... | १= ८- |
| | सावित्रीचरित्र | ... | ... | ... | ८- ८॥ |
| ॥ | सगम प्रियदर्शिका | ... | ... | ... | ८= ८॥ |
| | सुलभ विक्रमोर्वशी | ... | ... | ... | ८= ८॥ |
| | सुलभशकुंतल | ... | ... | ... | ८=॥ ८॥ |
| | शालिल्यमुना अथवा वासुदेव बळवंत फडक्यांच्या बंडाची | ... | ... | ... | १११० ८-॥ |
| | धामधूम | ... | ... | ... | ८- ८॥ |
| | शेफी गाणीं | ... | ... | ... | ८- ८॥ |
| | शळासोमवार | ... | ... | ... | ८- ८॥ |
| | श्रीशिक्षणबोध | ... | ... | ... | ८= ८॥ |
| पाठ: | श्रदेशाभिमान | ... | ... | ... | ८= ८॥ |
| | श्रीमद्भगवद्गीता, सुबोधचंद्रिका | ... | ... | ... | ११= ८- |

| | | | | किं० | ट० |
|--|-----|-----|-----|------|-----|
| बालबोध पहिलें पुस्तक | ... | ... | ... | ८- | ८॥ |
| „ दुसरें पुस्तक | ... | ... | ... | ८= | ८॥ |
| हरिविजय. (ओवीबद्ध) | ... | ... | ... | १॥ | ०॥० |
| निवडक बोधपर पदे व अभंग | ... | ... | ... | ८-॥ | ८॥ |
| मन्हाश्यांच्या संबंधानें चार उद्गार | ... | ... | ... | १। | ८= |
| शनिमाहात्म्य. (ओवीबद्ध) | ... | ... | ... | ८= | ८॥ |
| शूद्रकमलाकर | ... | ... | ... | ४ | ०। |
| श्रीधरकृत पांडवप्रताप | ... | ... | ... | ४ | ०॥= |
| स्त्रीगीत भाग पहिला | ... | ... | ... | ८= | ८- |
| „ भाग दुसरा | ... | ... | ... | ०।- | ८- |
| नाटकी गंशु | ... | ... | ... | ८- | ८॥ |
| नागानंदसार | ... | ... | ... | ८=॥ | ८॥ |
| पध्यापध्याविचार | ... | ... | ... | ८= | ८॥ |
| पाळणे | ... | ... | ... | ८॥ | ८॥ |
| प्रपंच आणि परमार्थ | ... | ... | ... | ८- | ८॥ |
| फुलांची परडी | ... | ... | ... | ०। | ८॥ |
| वाळमित्र | ... | ... | ... | ८- | ८॥ |
| भाऊवंदांत कलह उत्पन्न होऊन विभक्त होतात त्यांचीं | | | | | |
| कारणें काय व ते न होण्याचे उपाय. | ... | ... | ... | ०। | ८॥ |
| भूपाळ्या | ... | ... | ... | ८॥ | ८॥ |
| भ्रमनिरास | ... | ... | ... | ०॥० | ८- |
| मनुवचन | ... | ... | ... | ८- | ८। |
| महामारी | ... | ... | ... | ०।= | ८॥ |
| मुद्राराक्षससार | ... | ... | ... | ८= | ८॥ |
| मुलांस उत्तम वक्षीस | ... | ... | ... | ०॥ | ८- |

मीन्द्राणां चेतःकमलवनवालातपरुचिं
जन्ते ये सन्तः कतिचिदरुणामेव भवतीम् ।

दरिद्रिप्रेयस्यास्तरलतरशृङ्गारलहरीं

१६ श्रीराभिर्वाभिर्विदधति सतां रञ्जनममी ॥ १६ ॥

मुसवानी जे कोणही कितिक अरुणे तूज भजती
काविद्रांच्या चित्ता अतिशयित संतोष करिती ।

शिविरिंचीकन्येचे तरलतर शृंगारलहरी

१७ भगभीरां उक्तींहीं नकळत मला गोष्टि दुसरी ॥ १६ ॥

शिवित्रीभिर्वाचां शशिमणिशिलाभङ्गरुचिभि-

शिन्याद्याभिस्त्वां सह जननि संचिन्तयति यः ।

१८ कर्ता काव्यानां भवति कविताभङ्गिसुभगै-

चोभिर्वाग्देवीवदनकमलामोदमधुरैः ॥ १७ ॥

१९ सवित्री भाषांच्या शशिमणिशिलाखंडरुचिरा

वशिन्याद्या शक्ती सहित स्मरतो जो तुज बरा ।

करी काव्यें तोही वदत वचनें सुंदरतरे

सुगंधें वाग्देवीवदनकमलामोदमधुरें ॥ १७ ॥

तनुच्छायाभिस्ते तरुणतरणिश्रीसरणिभि-
 दिवं सर्वां मुर्वीं मरुणिमनि मग्नां स्मरति यः ।
 भवन्त्यस्य त्रस्यद्वनहरिणशालीननयनाः
 सहोर्वश्या वश्याः कतिकति न गीर्वाणगणिकाः ।

तुङ्गी देहच्छाया अरुणतर त्यामाजि चतुरें
 धरित्री द्यौ दोन्ही बुडत तुज ऐसें स्मरतसे ।
 स्वरूपानें त्रस्यद्वनहरिणशालीननयना
 तयाला उर्वश्यादिक वश बहू देवललना ॥ १८ ॥

मुखं विन्दुं कृत्वा कुचयुगमधस्तस्य तदधो
 हरार्धं ध्यायेद्यो हरमहिषि ते मन्मथकलाम् ।
 स सद्यः संक्षोभं नयति वनिता इत्यतिलघु
 त्रिलोकीमप्याशु भ्रमयति रवीन्दुस्तनयुगाम् ॥ १९ ॥

मुखस्थानीं विंदू कुचयुगल ज्याच्या तळवटीं
 जयापार्शीं आहे हरशकल योजून निकटीं ।
 जपे जो या योगें हरमहिषि तूङ्गी स्मरकला
 त्रिलोकीतें कालीं वश करिल ते काय अवला ॥ १९ ॥

रन्तीमङ्गेभ्यः किरणनिकुरम्बामृतरसं

जः त्वामाधत्ते हिमकरशिलामूर्तिमिव यः ।

सर्पाणां दर्पं शमयति शकुन्ताधिप इव

॥ ६ ॥ योरप्लुष्टं दृष्ट्या सुखयति सुधाधारसितया ॥ २० ॥

मु. गरीरापासूनी स्ववति निकुरंभामृतरसा

कि. अशी हे जे ध्याती हिमकरशिलामूर्ति मनसा ।

शि. भुजंगांच्या दर्पा हरुन गरुडाचे परि बरी

म. ॥ ज्वशर्ताच्या दुःखासहि अमृतदृष्टी दुरि करी ॥ २० ॥

रि. डिल्लेखातन्वीं तपनशशिवैश्वानरमयीं

शि. षण्णां षण्णामप्युपरि कमलानां तव कलाम् ।

हापद्माटव्यां मृदितमलमायेन मनसा

॥ ७ ॥ च हान्तः पश्यन्तो दधति परमानन्दलहरीम् ॥ २१ ॥

स. तडिल्लेखारूपें तपनशशिवन्हीसमकुलां

व. वसे साही चक्रांवारि जननि जे कीं तुझि कला ।

महापद्मारण्यां त्यजुनि मल माया तरि बरी

॥ ८ ॥ पाहाती जे ज्ञानी धरिति मनि आनंदलहरी ॥ २१ ॥

भवानि त्वद्वासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणा-
मिति स्तोतुं वाञ्छन्कथयति भवानि त्वमिति यः
तदैव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजितपदाम् ॥ २२ ॥

कृपादृष्टी पाहें भगवति तुझा दास मि असें
स्तूतीमध्ये ऐसें सहजच भवानी ह्मणतसे ।
तयाला ते काळीं दिससि निजसायुज्यसुगती
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रादिक मुकुटिं ओवाळिति कृती ॥ २२ ॥

त्वया हत्वा वामं वपुरपरितृप्तेन मनसा
शरीरार्धं शम्भोरपरमपि शङ्के हृतमभूत् ।
यदेतत्त्वद्रूपं सकलमरुणाभं त्रिनयनं
कुचाभ्यामानम्रं कुटिलशशिशूडालमुकुटम् ॥ २३ ॥

शिवे त्वां शंभूचें शरिर हरिलें वामहि असे
दुजें तें कां नेलें हृदयं मज शंका वसतसे ।
वदे तूझ्या रूपा अरुणकुचभारें कश कटी
त्रिनेत्रां सुत्र्यंबे कुटिलशशिशोभे सुमुकुटी ॥ २३ ॥

(१) ' तथापि ' इति पाठः.

गत्सूते धाता हरिरवति रुद्रः क्षपयते
 नरस्कुर्वन्नेतत्स्वमपि वपुरीशस्तिरयति ।
 दिता पूर्वः सर्वं तदिदमनुगृह्णाति च शिव-
 द्भोवाज्ञामालम्ब्य क्षणचलितयोर्भ्रूलतिकयोः ॥२४॥

मुक्तरि सृष्टी धाता हरि तरि तितें रक्षित असे
 विहरू संहारीतो शिवशरिर आच्छादित असे ।
 शि तुझ्या भूसंज्ञेतें मनि धरुनि आज्ञेस हि शिवें
 भ सदा पूर्वत्वानें सकल जग विस्तारित शिवे ॥ २४ ॥

याणां देवानां त्रिगुणजनिताना तव शिवे
 विवेत्पूजा पूजा तव चरणयोर्या विरचिता ।
 या हि त्वत्पादोद्ब्रहनमणिपीठस्य निकटे
 च्यता ह्येते शश्वन्मुकुलितकरोत्तंसमुकुटाः ॥२५॥

पदद्वंद्वीं तुझ्या पुजन जन जे नित्य करिती
 तिहीं देवांचे ते त्रिगुणजनिता होय निगुती ।
 शिवे ते कीं तुझ्या चरणमणिपीठासि निकटीं
 उभे नित्य द्वारी करयुगुल जोडून मुकुटीं ॥ २५ ॥

(१) 'सदा' इति पाठः.

भवानि त्वद्दासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणा-
मिति स्तोतुं वाञ्छन्कथयति भवानि त्वमिति य ।
तदैव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजितपदाम् ॥ २२ ॥

कृपादृष्टी पाहें भगवति तुझा दास मि असें
स्तूतीमध्ये ऐसें सहजच भवानी ह्यणतसे ।
तयाला ते काळीं दिससि निजसायुज्यसुगती
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रादिक मुकुटिं ओवाळिति कृती ॥ २२ ॥

त्वया हत्वा वामं वपुरपरितृप्तेन मनसा
शरीरार्धं शम्भोरपरमपि शङ्के हतमभूत् ।
यदेतत्त्वद्रूपं सकलमरुणाभं त्रिनयनं
कुचाभ्यामानघं कुटिलशशिचूडालमुकुटम् ॥ २३ ॥

शिवे त्वां शंभूचें शरिर हरिलें वामहि असे
दुजें तें कां नेलें हृदयं मज शंका वसतसे ।
वदे तूझ्या रूपा अरुणकुचभारें कृश कटी
त्रिनेत्रां मुत्र्यंबे कुटिलशशिशोभे सुमुकुटी ॥ २३ ॥

(१) ' तथापि ' इति पाठः.

जगत्सूते धाता हरिरवति रुद्रः क्षपयते
तिरस्कुर्वन्नेतत्स्वमपि वपुरीशस्तिरयति ।
तदा पूर्वः सर्वं तदिदमनुगृह्णाति च शिव-
स्तवाज्ञामालम्ब्य क्षणचलितयोर्भ्रूलतिकयोः ॥२४॥

करी सृष्टी धाता हरि तरि तितें रक्षित असे
हेरू संहारीतो शिवशरिर आच्छादित असे ।
तुझ्या भूसंज्ञेतें मनिं धरुनि आज्ञेस हि शिवें
सदा पूर्वत्वानें सकल जग विस्तारित शिवे ॥ २४ ॥

शिखाणां देवानां त्रिगुणजनिताना तव शिवे
भवेत्पूजा पूजा तव चरणयोर्या विरचिता ।
तथा हि त्वत्पादोद्वहनमणिपीठस्य निकटे
स्थिता ह्येते शश्वन्मुकुलितकरोत्तंसमुकुटाः ॥२५॥

पादद्वंद्वीं तुझ्या पुजन जन जे नित्य करिती
तिहीं देवांचे ते त्रिगुणजनिता होय निगुती ।
शिवे ते कीं तुझ्या चरणमणिपीठासि निकटीं
उभे नित्य द्वारी करयुगुल जोडून मुकुटीं ॥ २५ ॥

(१) 'सदा' इति पाठः.

भवानि त्वद्दासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणा-
मिति स्तोतुं वाञ्छन्कथयति भवानि त्वमिति य ।
तदैव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजितपदाम् ॥ २२ ॥

कृपादृष्टी पाहें भगवति तुझा दास मि असें
स्तूतीमध्ये ऐसें सहजच भवानी ह्यणतसे ।
तयाला ते काळीं दिससि निजसायुज्यसुगती
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रादिक मुकुटिं ओवाळिति कृती ॥ २२ ॥

त्वया हत्वा वामं वपुरपरितृप्तेन मनसा
शरीरार्धं शम्भोरपरमपि शङ्के हतमभूत् ।
यदेतत्त्वद्रूपं सकलमरुणाभं त्रिनयनं
कुचाभ्यामानघं कुटिलशशिचूडालमुकुटम् ॥ २३ ॥

शिवे त्वां शंभूचें शरिर हरिलें वामहि असे
दुजें तें कां नेलें हृदयं मज शंका वसतसे ।
वदे तूझ्या रूपा अरुणकुचभारें कश कटी
त्रिनेत्रां मुज्यंवे कुटिलशशिशोभे सुमुकुटीं ॥ २३ ॥

(१) ' तथापि ' इति पाठः.

जगत्सूते धाता हरिरवति रुद्रः क्षपयते
तिरस्कुर्वन्नेतत्स्वमपि वपुरीशस्तिरयति ।
तदा पूर्वः सर्वं तदिदमनुगृह्णाति च शिव-
स्तवाज्ञामालम्ब्य क्षणचलितयोर्भ्रूलतिकयोः ॥२४॥

करी सृष्टी धाता हरि तरि तितें रक्षित असे
हूरू संहारीतो शिवशरिर आच्छादित असे ।
तुझ्या भूसंज्ञेतें मनिं धरुनि आज्ञेस हि शिवें
सदा पूर्वत्वानें सकल जग विस्तारित शिवे ॥ २४ ॥

शिखाणां देवानां त्रिगुणजनिताना तव शिवे
भवेत्पूजा पूजा तव चरणयोर्या विरचिता ।
तथा हि त्वत्पादोद्वहनमणिपीठस्य निकटे
स्थिता ह्येते शश्वन्मुकुलितकरोत्तंसमुकुटाः ॥२५॥

पादद्वंद्वीं तुझ्या पुजन जन जे नित्य करिती
तिहीं देवांचे ते त्रिगुणजनिता होय निगुती ।
शिवे ते कीं तुझ्या चरणमणिपीठासि निकटीं
उभे नित्य द्वारी करयुगुल जोडून मुकुटीं ॥ २५ ॥

(१) 'सदा' इति पाठः.

विरञ्चिः पञ्चत्वं व्रजति हरिरामोति निधनं
 विनाशं कीनाशो भजति धनदो याति निधनम् ।
 वितन्द्रा माहेन्द्री विततिरपि सम्मीलितदृशं
 महासंहारेऽस्मिन्विहरति सति त्वत्पतिरसौ ॥२६॥

विरञ्चिला येतें मरण मग तैसेंच हरितें
 यम आसी मृत्यू धनद तारि पावे निधन तें ।
 महासंहारींही जननि तुज स्वातंत्र्य विलसे
 शिवातें भी नाहीं पति ह्युण तुझा वांचत असे ॥ २६ ॥

जपो जल्पः शिल्पं सकलमपि मुद्राविरचनं
 गतिः प्रादक्षिण्यक्रमणमशनाद्याहुतविधिः ।
 प्रणामः संवेशः सुखमखिलमात्मार्पणदृशा
 सपर्यापर्यायस्तव भवतु यन्मे विलसितम् ॥ २७ ॥

वदें जें मीं कांहीं जप चलनमुद्रादिक तुझें
 फिरे प्रादक्षिण्यक्रमण अशनीं होमिहि तसें ।
 करीं निद्रा जे मी नमन तुज साष्टांग रजनी
 असो ऐसी पूजा सकळ मम चेष्टीत जननी ॥ २७ ॥

(१) 'विलसति' इति पाठः.

सुधामप्यास्वाद्य प्रतिभयजरामृत्युहरिणीं
 विपद्यन्ते विश्वे विधिशतमखाद्या दिविषदः ।
 करालं यत्क्ष्वेडं कवलितवतः कालकलना
 न शांभोस्तन्मूलं जननि तव ताटङ्कमहिमा ॥२८॥

सुधेतैही प्याल्या विधिशतमखादीक मरती
 जिच्या योगें विश्वीं पशु भय नरा मृत्यु हरती ।
 विष प्राशी शंभू मरण न पवे थोर गरिमा
 मला भासे ऐसें जननि तव ताटंकमहिमा ॥ २८ ॥

किरीटं वैरिञ्चं परिहरपुरः कैटभभिदः
 कठोरे कोटीरे स्खलसि जहि जम्भारिमुमुटम् ।
 क्ष्माश्वेतेषु प्रसभमभियातस्य भवनं
 सवत्याभ्युत्थाने तव परिजनोक्तिर्विजयते ॥ २९ ॥

किरीटा ब्रह्माच्या दुरि करि पुढें पाद हरिच्या
 शिरें टोपाला तूं अटखळसि टाकी द्युपतिचा ।
 नमस्कारा येती अमर तुज ब्रह्मादिकहि जे
 शिवाच्याभ्युत्थानीं तुज परिजनें हेचि कथिजे ॥ २९ ॥

(१) 'हरणीं' इति पाठः. (२) 'हरस्याभ्यु' इति पाठः.

चतुःषष्ट्या तत्रैः सकलमभिसंधाय भुवनं
 स्थितस्तत्तत्सिद्धिः प्रसभपरतत्रः पशुपतिः ।
 पुनस्त्वन्निर्वन्धादखिलपुरुषार्थैकघटना-
 त्स्वतत्रं ते तत्रं क्षितितलमवातीतरदिदम् ॥ ३० ॥

चतुःषष्टी तंत्रे सकळ भुवनामाजि जरि हे
 तयाची जे सिद्धी पुरवि परतंत्रे पशुपती ।
 तुझ्या निर्वन्धातें सकळपुरुषार्थेचि घडलें
 स्वतंत्रत्वे तूजें क्षितितळि पुन्हा हें उतरलें ॥ ३० ॥

शिवः शक्तिः कामः क्षितिरथ रविः शीतकिरणः
 स्मरे हंसः शक्रस्तदनु च परामारहरयः ।
 अमी हल्लेखाभिस्तिसृभिरवसानेषु घटिता
 भजन्ते वर्णास्ते जननि तव नामावयवताम् ॥ ३१ ॥

शिवः शक्तिः कामः क्षिति मग रवी शीतकिरण
 अनंगू हंसेंद्र मदन हरि ते जाण तदनु ।
 तिहीं हल्लेखांहीं त्रितयअवसानींत लिहिलें
 तुझ्या मंत्रांचे हे अवयव च त्या होतिल भलें ॥ ३१ ॥

स्मरं योनिं लक्ष्मीं त्रितयमिदमादौ तव मनो
निधायैके नित्यं निरवधिमहाभोगरसिकाः ।
जपन्ति त्वां चिन्तामणिगुणनिबद्धाक्षवल्याः
शिवाग्रौ जुह्वन्तः सुरभिघृतधाराहुतिशतैः ॥ ३२ ॥

स्मरू योनी लक्ष्मी त्रितय विज तूझे दृढ मनीं
जपे जो त्या होती सकलिक महाभोग धरणीं ।
करीं माळा चिन्तामणिसहित रुद्राक्ष विलसे
शिवाग्रीच्याठाई सुरभिघृत होमूनि बहुसे ॥ ३२ ॥

शरीरं त्वं शंभोः शशिमिहिरवक्षोरुहयुगं
तवात्मानं मन्ये भगवति भवात्मानमनघम् ।
अतः शेषः शेषीत्ययमुभयसाधारणतया
स्थितः संबन्धो वां समरसपदानन्दपरयोः ॥ ३३ ॥

शशी भानू दोन्ही कुचयुगल शोभेच शरिरीं
तुझ्या देहाला मी भगवति शिवात्मा मनि धरीं ।
तुह्मां दोहींचा हा उभयसम संबंध घडला
ह्मणोनीयां शेषे चरणकमळीं ठाव धरिला ॥ ३३ ॥

(१) 'नित्ये' इति पाठः. (२) 'यजति' इति पाठः.

मनस्त्वं व्योम त्वं मरुदसि मरुत्सारथिरसि
 त्वमापस्त्वं भूमिस्त्वयि परिणतायां न हि परम् ।
 त्वमेव स्वात्मानं परिणमयितुं विश्ववपुषा
 चिदानन्दाकारं शिवयुवति भावेन विभृषे ॥ ३४ ॥

पृथिव्यापस्तेजःपवन मन आकाशसमुदे
 तुवां केले जातां तुजचि तरि हें जाय समुदे ।
 स्वकीया देहाला शिवयुवति ऐसैं ह्मणविसी
 परी अंतीं विश्वादिक सकळ हें तूंच हरिसी ॥ ३४ ॥

तवाधारे मूले सहसमयया लास्यपरया
 तवात्मानं मन्ये नवरसमहाताण्डवनटम् ।
 उभाभ्यामेताभ्यामुदयविधिमुद्दिश्य दयया
 सनाथाभ्यां जज्ञे जनकजननीमज्जगदिदम् ॥ ३५ ॥

तुझ्या आज्ञाचक्रीं तपन शशिकोटी द्युति असे
 तयाची तो शंभु तुजसहित आधीं नमितसे ।
 जयाचें प्रीतीनें भजन करितां प्राप्त पदवी
 नसे जैसैं अंबे हुतवह शशी आणिक रवी ॥ ३५ ॥

(१) 'हरमहिषि' इति पाठः.

तव स्वाधिष्ठाने हुतवहमधिष्ठाय निरतं
तमीडे संवर्तं जयति महतीं त्वां च समयम् ।
यदा लोके लोकान्दहति महति क्रोधकलिके
दयार्द्रा या दृष्टिः शिशिरमुपचारं रचयति ॥ ३६ ॥

विशुद्धाब्जिं तूझ्या स्फटिकसम कांती शिव असे
तुझी तैसी मूर्ती उभयसमशीले वसतसे ।
जयाचे कांतीनें सकळ निरसे ध्वांतकपिसें
दयार्द्रा ही दृष्टी शिशिर उपचारा करितसे ॥ ३६ ॥

तंडित्चन्तं शाक्त्या तिमिरपरिपन्थिस्फुरणया
स्फुरन्नानारत्नाभरणपरिणद्धेन्द्रधनुषम् ।
तव श्यामे मेघं कमपि मणिपूरैकशरणं
निषेवे वर्षन्तं हरमिहिरतप्तं त्रिभुवनम् ॥ ३७ ॥

नमस्कारी मेघासदृश शिव जोही मणिपुरीं
जयापाशीं शक्ती झळकत असे वीज दुसरी ।
जडावाचे जेथें नग झळकती इंद्रधनुषें
हराकें संतप्त त्रिभुवन तया वर्षत असे ॥ ३७ ॥

(१) 'जनति महतीं तां च समयाम्' इति पाठः. (२) 'धरि-
त्री त्वं' इति पाठः.

समुन्मीलत्संवित्कमलमकरन्दैकरसिकं
 भजे हंसद्वन्द्वं किमपि महतां मानसचरम् ।
 यदालापादष्टादशगुणितविद्यापरिणति-
 र्यदादत्ते दोषान्गुणमखिलमद्भ्यः पय इव ॥ ३८ ॥

अखंडत्वे जे कां हृदयकमळीं प्रीति धरितें
 नमस्कारी हंसद्वयऋषिमनीं जेंचि वरितें ।
 मिथोवाक्यें अष्टादशगुणितविद्या निपजते
 गुणाला घे दोषांतुन जइं जलांतून दुध तें ॥ ३८ ॥

विशुद्धौ ते शुद्धस्फटिकविशदं व्योमजनकं
 शिवं सेवे देवीमपि शिवसमानव्यसनिनीम् ।
 ययोः कान्त्या यान्त्या शशिकिरणसारूप्यसरणि-
 विधूतान्तर्ध्वान्ता विलसति चकोरीव जगति ॥ ३९ ॥

विशुद्धाब्जीं तूझा स्फटिकसमकांती शिव असे
 तुझी तैसी मूर्ती उभयसमशीले वसतसे ।
 जयाचे कांतीनें सकल निरसे ध्वांत कपिसें
 धरित्री द्यौ दोन्ही विलसत चकोरीं परि दिसे ॥ ३९ ॥

(१३.) 'सदृशं' इति पाठः.

४४०
११/१२. २००९

१०. २१/१३

सौख्यलहरीटीका । २१३ २१
३६२ ३३, २४

तवाज्ञाचक्रस्थं तपनशशिकोटिद्युतिधरं
परं शंभुं वन्दे परिमिलितपार्श्वं परचिंदा ।
यमाराध्यं भक्त्या रविशशिशुचीनामविषये
निरालोके लोके निवसति चिंदा लोकभवने ॥४०॥

तुझ्या आज्ञाचक्रीं तपनशशिकोटिद्युति असे
तयाचा तो शंभु तुजसहित आधीं नमितसे ।
जयाचें प्रीतिनें भजन करितां प्राप्त पदवी
नसे जेथें अवे हुतवह शशी आणिक रवी ॥ ४० ॥

गतैर्माणिक्यत्वं गगनमणिभिः सान्द्रघटितं
किरीटं ते हैमं हिमगिरिसुते वर्णयति यः ।
सुनीले यच्छायाछुरणशबला चन्द्रकैलिका
धनुः शौनासीरं किमपि न निबध्नाति धिषणाम् ॥४१॥

किरीटाची शोभा कवण कवि वर्णील जननी
तयासी नक्षत्रें मणिसदृश जोडोन नयनीं ।
पडे छाया त्याची शशिशबल वर्णीं ह्मणुं दिसे
धनू इंद्राचें हें अलसजन बुद्धी ह्मणतसे ॥ ४१ ॥

(१) 'चिता'. (२) 'हिमा'. (३) 'कीर्तयति'. (४) 'सनीडे'.
(५) 'चन्द्रशकल'. (६) 'किमिदमिति'.

गुस्तकावय
गुरुकुल कांगड़ी

धुनोतु ध्वान्तं नस्तुलितदलितेन्दीवरवनं
 घनं स्निग्धं श्लक्ष्णं चिकुरनिकुरम्बं तव शिवे ।
 यदीयं सौरभ्यं सहजमुपलब्धुं सुमनसो
 वसन्त्यस्मिन्मन्ये सुरविटपिवाटीविटपिनः ॥ ४२ ॥

हरू शामाज्ञाना कुटिलतर ते केशहि तुझे
 जयांच्या सौंदर्ये विजित कमळेंदीवर असे ।
 सुगंधाची इच्छा धरुन सुमनें देवतरुचीं
 शिरीं तूझ्या केशीं वसति करिती हो तुं मजची ॥ ४२ ॥

वहन्ती सिन्दूरं प्रबलकवरीभारतिमिरं
 त्विषां वृन्दैर्बन्दीकृतमिव नवीनार्ककिरणम् ।
 तनोतु क्षेमं नस्तव वदनसौन्दर्यलहरी-
 परीवाहः स्रोतःसरणिरिव सीमन्तसरणिः ॥ ४३ ॥

शिवे सिंदूरानें सरळ शिरिं जो भांग भरला
 करू आधीं तोही परम सुखि कल्याण मजला ।
 तूझ्या केशांचें जें मिष करुन आधारारिपुनें
 दिल्ला बंदीखानीं मज गमतसे सूर्य किरणें ॥ ४३ ॥

(१) 'बलमथनघाटीविटपिनाम्' इति पाठः.

अरालैः स्वाभाव्यादलिकुलहसश्रीभिरलकैः
परीतं ते वक्रं परिहसति पङ्केरुहरुचिम् ।
दरस्मेरे यस्मिन्दशनरुचिकिंजल्करुचिरे
सुगन्धे माद्यन्ति स्मरमथनचक्षुर्मधुलिहः ॥ ४४ ॥

स्वभावे जे काळे अलकभ्रमराचेपरि तुझे
तयाहीं हें तूजें मुखकमळ कांतीसि विहसे ।
मुखीं आहे तूझ्या दशनरुप किंजल्क ह्मणुंही
सुगंधातें माते मदन कमळीं तो भ्रमरही ॥ ४४ ॥

ललाटं लावण्यद्युतिर्विलसदाभाति तव य-
द्वितीयं तन्मन्ये मुकुटशशिखण्डस्य शकलम् ।
विपर्यासन्यासादुभयमपि संभूय च मिथः
सुधालेपस्फूर्तिः परिणमति राकाहिमकरः ॥ ४५ ॥

तुझ्या लावण्यानें विलसत असे जें निदळही
मला वाटे दूजें मुकुट शशिचें तें शकलही ।
वरीं दोन्ही खांडें जडलिं जरि तीं अमृतरसें
शरत्पूर्णा चंद्राहुनि अधिक शोभा मग दिसे ॥ ४५ ॥

(१) 'विमलमाभाति'. (२) 'कृतसंधानमथितः'.

भ्रुवौ भुग्ने किञ्चिद्भुवनभयभङ्गव्यसनिनि
 त्वदीये नेत्राभ्यां मधुकररुचिभ्यां धृतगुणे ।
 धनुर्मध्ये सव्येतरकरगृहीतं रतिपतेः
 प्रकोष्ठे मुष्टौ च स्थगयति निगूढान्तरमुभे ॥ ४६ ॥

तुझ्या भ्रूलेखांचें युगुल दिसतें जें कुटिलसें
 जयाखालीं दोन्ही नयन भ्रमराचें सित असे ।
 जगा वाटे हें तों मदनधनु सव्येतरकरीं
 प्रकोष्ठीं मुष्टीनें गुपित दिसतें सज्जहि करीं ॥ ४६ ॥

अहः सूते सव्यं तव नयनमर्कात्मकतया
 त्रियामां वामं ते सृजति रजनीनायकतया ।
 तृतीया ते दृष्टिर्दरदलितहेमाम्बुजरुचिं
 समाधत्ते संध्या दिवसनिशयोरन्तरचरीम् ॥ ४७ ॥

शिवे सव्ये नेत्रे सृजसि दिवसां सूर्य ह्यणुनी
 दुजा नेत्रे रात्री करिशि शशिचें रूप जननी ।
 करी संध्याकाळीं भगवति तुझी दृष्टि तिसरी
 दिवारात्रीमध्ये सहजच असे अंतरचरी ॥ ४७ ॥

(१) 'नायकमयम्' इति पाठः.

विशाला कल्याणी स्फुटरुचिरयोध्या कुवलयैः
कृपाधारापारा किमपि मधुरा भोगवतिका ।
अवन्ती दृष्टिर्या बहुनगरविस्तारविजया
ध्रुवं तत्तन्नामव्यवहरणयोग्या विजयते ॥ ४८ ॥

विशाला जे आहे प्रगटरूप कल्याण करिते
अयोध्या नोहे कां किमपि मधुरा वा ह्मणविते ।
अवंती किंवा हे बहुनगरविस्तार इजला
असी वाटे तूझी नगरि विजयी दृष्टि मजला ॥ ४८ ॥

कवीनां संदर्भस्तवकमकरन्दैकरसिकं
कटाक्षव्याजेन भ्ररकलभौ कर्णयुगलम् ।
अमुञ्चन्तौ दृष्ट्वा तव नवरसास्वादतरता
वसुं या संसर्गादलिकनयनं किञ्चिदरुणम् ॥ ४९ ॥

कवीच्या संदर्भस्तवकरससंपूर्णश्रवणें
कटाक्षव्याक्षेप भ्रमर करिचें कर्णें बसणें ।
न जाती तेथूनी तव नवरसें भ्रांत जइसे
तयांचा हर्षानें नयन तिसरा तांबट दिसे ॥ ४९ ॥

(१) ' दृष्टिस्ते ' (२) ' भरितं कटाक्षव्याक्षेप '

शिवे शृङ्गाराद्रा तदितरमुखे कुत्सनपरा
 सरोषा गङ्गायां गिरिशचरिते विस्मयवती ।
 हराहिभ्यो भीता सरसिरुहसौभाग्यजननी
 सखीषु स्मेरा ते मयि जयति दृष्टिः सकरुणा ॥५०॥

शिवासी शृंगारें इतर जन निंदेसि करिती
 सरागें गंगेसी हरचरिति आश्चर्य धरिती ।
 हराहीपासूनी मित सकळसौभाग्य जइसें
 सख्यांशीं हास्यानें सकरुण असो जाण मज तें ॥ ५० ॥

गते कर्णाभ्यर्णं गरुत इव पक्ष्माणि दधती
 पुरां भेत्तुश्चितं प्रशमरसविद्रावणफले ।
 इमे नेत्रे गोत्राधरपतिकुलोत्तंसकलिके
 तवाकर्णाकृष्टः स्मरशरविलासं कलयतः ॥ ५१ ॥

उमे गेले कर्णासमिप गरुडाचेपरि जणों
 पुरारीचें चित्त क्षुधित परजे काय हि ह्मणों ।
 तुझे हे कीं नेत्र क्षितिधरसुते दीसति तसे
 जसे कर्णापाशी मदनशर वोढी तरि असे ॥ ५१ ॥

(१) 'शृङ्गाराङ्गे तदितरजने'. (२) 'वितर दृष्टिं सकरुणाम्'.

विभक्तत्रैवर्ण्यं व्यतिकरितनीलाञ्जनतया
विभाति त्वन्नेत्रत्रितयमिदमीशानदयिते ।
पुनः स्रष्टुं देवान्द्रुहिणहरिरुद्रानुपरतान्
रजः सत्त्वं बिभ्रत्तम इति गुणानां त्रयमिदम् ॥ ५२ ॥

तुझ्या नेत्रीं काळें प्रगट रूप तें अंजन दिसे
तयानें हें नेत्रत्रितय बहु शोभे तरि तुझें ।
महाकल्पीं गेले हरिहरविरंच्यादि न पुन्हा
सृजायाला त्यातें चरसि जवळी जाण त्रिगुणा ॥ ५२ ॥

पवित्रीकर्तुं नः पशुपतिपराधीनहृदये
दयामित्रैर्नेत्रैररुणधवलश्यामरुचिभिः ।
नदः शोणो गङ्गातपनतनयेति ध्रुवमैमुं
त्रयाणां तीर्थानामुपनयसि संभेदमनघे ॥ ५३ ॥

तुझ्या अंबे नेत्रीं अरुणधवलश्यामलकता
मला वाटे ते तों कनकनदगंगे रविसुता ।
दयादृष्टीनें तूं करिन ह्मणसी पावन मला
तिहीं तीर्थांचा हा ह्मणुन करिसी संगम भला ॥ ५३ ॥

(१) 'व्यतिकरितनीलाम्बुजतया'. (२) 'त्रयमिव'. (३) 'ध्रुवमिमं'.

तवापर्णे कर्णेजपनयनपैशून्यचकिता
 निलीयन्ते तोये नियतमनिमेषाः शफरिकाः ।
 इयं च श्रीर्विद्धलदपुटकपाटं कुवलयं
 जहाति प्रत्यूषे निशि च विघटय्य प्रविशति ॥५४॥

अपर्णे त्वत्कर्णेजपनयनपैशून्य चकती
 जळीं उन्मेषाच्या शफरि नियतत्वे च बुडती ।
 दुचित्तेही लक्ष्मी कमळग्रह लाऊनि फलते
 भयाने प्रत्यूषीं निशिस उघडूनि प्रविशते ॥ ५४ ॥

निमेषोन्मेषाभ्यां प्रलयमुदयं याति जगती
 तवेत्याहुः सन्तो धरणिधरराजन्यतनये ।
 त्वदुन्मेषाज्जातं जगदिदमशेषं प्रलयतः
 परित्रातुं शङ्के परिहृतनिमेषास्तव दृशः ॥ ५५ ॥

निमेषोन्मेषांहीं प्रळय जन पावे त्रिजगतीं
 भले संत ज्ञानी भगवति असें सत्य ह्मणती ।
 त्वदुन्मेषें जालें जग सकळ याला प्रळयसा
 न व्हायाला शंके न करिसि निमेषांसि सहसा ॥ ५५ ॥

(१) 'पुट' इति पाठः'

दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा
दवीयांसं दीनं स्तपय कृपया मामपि शिवे ।
अनेनायं धन्यो भवति न च ते हानिरियती
वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥ ५६ ॥

विशाळा जे दृष्टी निळकमळकांतीसम बरी
ल्यानें दीनाला मज जननि तूं हानिसि जरी ।
जगीं मी धन्यत्वे वसन तुझि तों हानिहि नसे
नृपागारीं रानींसम किरण टाकी शशि कसे ॥ ५६ ॥

अरालं ते पालीयुगलमगराजन्यतनये
न केषामाधत्ते कुसुमशरकोदण्डकुतुकम् ।
तिरश्चीनो यत्र श्रवणपथमुलङ्घ्य विलस-
न्नपाङ्गव्यासङ्गो दिशति शरसंधानधिपणाम् ॥ ५७ ॥

कपोलांचें तूझ्या युगळ जननी दीसत कसें
स्मरारी शत्रूचें सशर धनु तें काय हि असें ।
असे जेथें कर्णत्यजुन तरि सापत्न लटतो
जना तेव्हां वाटे मदन शरसंधान करितो ॥ ५७ ॥

स्फुरद्वण्डाभोगप्रतिफलितताटङ्कयुगलं
चतुश्चक्रं मन्ये तव मुखमिदं मन्मथरथम् ।
यमारुह्य द्रुह्यत्यवनिरथमर्केन्दुचरणं
महावीरो मारः प्रमथपतये खं जितवते ॥ ५८ ॥

सुताटकछाया जननि तुज गालावरि दिसे
चहूं चक्रांचा हा मदनरथ मानी मुख तुझे ।
वसोनीयां जेथें प्रथम तिजसीं द्रोह पुरवी
स्वयें जिंकी ज्याची अवनिरथ चाकें शशि रवी ॥ ५८ ॥

सरस्वात्याः सूक्तीरमृतलहरीकौशलहरी
पिवन्त्या शार्वाणि श्रवणचुलकाभ्यामविकलम् ।
चमत्कारश्लाघाचलितशिरसः कुण्डलगणो
झणत्कारैस्तारैः प्रतिवचनमाचष्ट इव ते ॥ ५९ ॥

विधीकन्या वाणी अमृतलहरी तूंच समुदा
पिशी वो शर्वाणि श्रवणचुळ वाही तरि सदा ।
चमत्कारें जेव्हां शिरकमळ हाले तरि तुजें
झणत्कारें कर्णाप्रति वचनभूषा वदतसें ॥ ५९ ॥

१) 'कोशसदृशीः' इति पाठः. (२) 'मविरतम्' इति पाठः.

असौ नासावंशस्तुहिनगिरिवंशध्वजपट—
स्त्वदीयो नेदीयः फलतु फलमस्माकमुचितम् ।
वहन्नन्तर्मुक्ताः शिशिरतरनिश्वासविहिताः
समृद्ध्या यस्तासां बहिरपि च मुक्तामणिधरः॥६०॥

तुझ्या संपत्तीनें उचित रूप अह्मास हि फळे
जयामध्ये मुक्तागण शिरसि निश्वास घडले ।
तसा वेळू आला प्रकट मणि बाहेरचि दिसे
तयाला हें मौंती जन ह्मणतसे उत्तम असे ॥ ६० ॥

प्रकृत्या रक्तायास्तव सुदति दन्तच्छदरुचेः
प्रवक्ष्ये सादृश्यं जनयतु फलं विद्रुमलता ।
न बिम्बं त्वद्विम्बप्रतिफलनरागादरुणितं
तुलामध्यारोढुं कथमिव न लज्जेत कलया ॥ ६१ ॥

तवोष्ठाची अंबे सहजच असे तों अरुणता
बरी कीं साम्यत्वा कसि करिल ते विद्रुमलता ।
दुजें तें कीं बिंबाफलहि परि पाकास्तव तसें
तुला पावायाला भगवति न लाजेल हि कसें ॥ ६१ ॥

(१) 'घटिताः'. (२) 'क बिम्बं दृग्विम्बप्रतिफलन'.

स्मितज्योत्स्नाजालं तव वदनचन्द्रस्य पिवतां
 चकोराणामासीदतिरसतया चञ्चुजडिमा ।
 अतस्ते शीतांशोरमृतलहरीमम्लरुचयः
 पिवन्ति स्वच्छन्दं निशिनिशि भृशं काञ्जिकधिया ॥

स्मितज्योत्स्ना तूझ्या वदनशशिची पीत असतां
 चकोरां जे जाली अतिमधुपणें चंचुजडता ।
 ह्मणोनीयां स्वेच्छें शशिजअमृता अम्लरुचिनें
 पिती रात्रीं रात्रीं बहुत बहु तें कांजिक मनें ॥ ६२ ॥

अविश्रान्तं पत्युर्गुणगणकथाम्रेडनजडा
 जपापुष्पछाया तव जननि जिह्वा विजयते ।
 यदग्रासीनायाः स्फटिकदृषदस्वच्छविमयी
 स्वरस्वत्या मूर्तिः परिणमति माणिक्यवपुषा ॥ ६३ ॥

अखंडत्वे जेंकां पतिगुणकथोच्चारण करी
 जपापुष्पछायासदृश तव जिह्वांग कुमरी ।
 पुढें जीच्या ऐसें स्फटिकदृषदांचेपारि रुची
 अखंडत्वे पाहे वदत तनया जाण विधिची ॥ ६३ ॥

(१) 'चारु' इति पाठः. (२) 'जयति सा'. (३) 'दृषद-
 च्छविरुचिः'

रणे जित्वा दैत्यानपहतशिरस्त्रैः क्वचिभि-
निवृत्तैश्चण्डीशत्रिपुरहरनिर्माल्यविमुखैः ।
विरिञ्चेन्द्रोपेन्द्रैः शशिशिशिरकर्पूरशबला
विलुप्यन्ते मातस्तव वदनताम्बूलशकलाः ॥ ६४ ॥

जितोनीयां दैत्यां हरुन शिरटोपा क्वचि जे
फिरोनीयां आले विधिहरिपतींद्रानुसहिजे ।
तुझ्या तांबूलाचा शितलगणिका घेतिल मुखें
भवानी चंडीश त्रिपुरहरनिर्माल्यविमुखें ॥ ६४ ॥

विपञ्च्या गायन्ती विविधमवदातुं पशुपते-
स्त्वयारब्धं वक्तुं चलितशिरसा साधुवचनैः ।
त्वदीये माधुर्यैरपलपिततन्त्रीकलरवा
निजां वीणां वाणी निचुलयति चैलेन निभृतम् ॥ ६५ ॥

विपंचीनें शंभू गुण विविध गाईन ह्यणसी
हळू रागोद्धारे शिरकमळ तूं उंच करिसी ।
तुझ्या माधुर्यानें बहुत तरि लाजोनिच खरी
विधीची जे कन्या पदर निजवीणेवर करी ॥ ६५ ॥

(१) ' धवला विलिप्यन्ते . ' (२) ' स्खलितवचसा साधुवचने . '

कराग्रेण स्पृष्टं तुहिनगिरिणा वत्सलतया
 गिरीशेनोदस्तं मुहुरधरपानाकुलतया ।
 करग्राह्यं शंभोर्मुखमुकुरवृत्तं गिरिसुते
 कथंकारं ब्रूमस्तव चिबुकमौपम्यरहितम् ॥ ६६ ॥

हिमाद्रीनें हातें स्पृशित मुख जें वत्सलपणें
 गिरीशानें प्रीतीस्तव अधरपाना उचलिलें ।
 करीं शंभूच्या जें वरतुल जसाऽदर्शहि दिसे
 तयाजोगी अंवे जगतिं उपमा जाण न दिसे ॥ ६६ ॥

भुजाश्लेषान्नित्यं पुरंविजयिनः कण्ठकवती
 तव ग्रीवा धत्ते मुखकमलनालश्रियमियम् ।
 स्वतः श्वेता कालागुरुबहलजम्बालमलिना
 मृणालीलालित्यं वहति यदधो हारलतिका ॥ ६७ ॥

जिला कांटे येती शिव करित आलिंगन जहां
 दिसे ग्रीवा तूझी मुखकमळनाळासम तहां ।
 स्वता जें कीं आहे मलिन अगुरुश्यामरूप कां
 मृणालाचे शोभेसहि करित ते हारलतिका ॥ ६७ ॥

(१) 'पुरदमयितुः' इति पाठः.

गले रेखास्तिस्त्रो गतिगमकगीतैकनिपुणै-
विवाहव्यानद्धैः प्रगुणगुणसंख्याप्रतिभुवम् ।
विराजन्ते नानाविधमधुररागाकरभुवां
त्रयाणां ग्रामाणां स्थितिनियमसीमान इव ते ॥ ६८ ॥

गळीं रेखा तीन्ही दिसति प्रतिभूमीसहि वरी
विवाहीं जे वद्धत्रिगुणगुणसंख्या तरि खरी ।
मला वाटे नानाविध मधुररागास्तव कसे
तिहीं ग्रामींच्या ह्या नियमित शिवाचे पदरसे ॥ ६८ ॥

मृणालीमृद्वीनां तव भुजलतानां चतसृणां
चतुर्भिः सौन्दर्यं सरसिरुहजः स्तौति वदनैः ।
नखेभ्यः संत्रस्यत्प्रथममथनादन्धकरिपो-
श्चतुर्णां वक्राणां सममुभयहस्तार्पणधिया ॥ ६९ ॥

तुझ्या जें कीं चाऱ्ही भुजहि कमळांचें विज जसें
तयाच्या सौंदर्या विधि चहुंमुखीं वर्णित असे ।
नखांचें शंभूच्या भय धरित जोही मनिं अती
वदे या चौशीर्षा अभय मज दे तूं भगवती ॥ ६९ ॥

-
- (१) 'निपुणे विवाहव्यानद्धत्रिगुणगुणसंख्याप्रतिभुवः' इति पाठः.
(२) 'सरसिजभवः' इति पाठः. (३) 'हस्तार्पण' इति पाठः.

नखानामुदयोतैर्नवनलिनरागैर्विहसतां
कराणां ते कान्तिं कथय कथयामः कथममी ।
कयाचिद्वा साम्यं भजतु कलया हन्त कमलं
यदि क्रीडलक्ष्मीचरणतललाक्षारुणदलम् ॥ ७० ॥

नखांच्या दीप्तीनें नुतन कमळालांगिं हरते
करांची जे कांती कसि तरि वदों तूंचि वद तें ।
कदाचित्ते लक्ष्मी कमळदाळिं क्रीडे रसपदे
तई साम्यत्वा ये सुकरकलिकापद्मसमुदे ॥ ७० ॥

समं देवि स्कन्दद्विपवदनपीतं स्तनयुगं
तवेदं नः खेदं हरतु सततं प्रस्रुतमुखम् ।
यदालोक्याशङ्काकुलितहृदयो हासजनकः
स्वकुम्भौ हेरम्बः परिमृशति हस्तेन झटिति ॥ ७१ ॥

हरू खेदा माझ्या कुचयुग तुझे प्रस्रुत सदा
पिती एक्या वेळे तनययुग हेरंबहि मुदा ।
गजास्ये देखोनी निजहृदयिं शंकेस्तव करे
स्वकुंभांतें काळीं परिमृशतसे शीघ्र चतुरें ॥ ७१ ॥

(१) ' कथमुमे ' इति पाठः.

अमू ते वक्षोजावमृतरसमाणिक्यकुतुपौ
न संदेहः स्यन्दो नगपतिपताके मनसि नः ।
पिबन्तौ तौ यस्मादविदितवधूसंगमरसौ
कुमारावद्यापि द्विरदवदनक्रौञ्चदलनौ ॥ ७२ ॥

अहो अंबे तूझ्या कुचमणिघटीं अमृत वसे
यदर्थी तो मानी नगपतिमुते संशय नसे ।
पिती दोन्ही तूझे तनय वय कौमार पहिलें
तयांला अद्यापी सुख रमणिचेंही न कळलें ॥ ७२ ॥

वहत्यम्ब स्तम्बेरमदनुजकुम्भप्रकृतिभिः
समारब्धां मुक्तामणिभिरमलां हारलतिकाम् ।
कुचाभोगो बिम्बाधररुचिभिरन्तः शबलितां
प्रतापव्यामिश्रां पुरविजयिनः कीर्तिमिव ते ॥ ७३ ॥

कुचांमध्ये हारी मणिविमळ मुक्ता विलसती
गजाचे दैत्याचे घननिबिडसे कुंभ असती ।
मला भासे तेथें अरुणमणि देखोन बरवे
प्रतापें संमिश्रा त्रिपुरविजयी कीर्ति मिरवे ॥ ७३ ॥

तव स्तन्यं मन्ये धरणिधरकन्ये हृदयतः
 पयः पारावारं परिवहति सारस्वत इव ।
 दयावत्या दत्तं द्रविडशिथुरास्वाद्य तव य-
 त्कवीनां प्रौढानामजनि कमनीयः कवयिता ॥७४॥

तुझे दोन्ही हे कां कुचहि कनकाचे घट जसे
 निघाले दोर्मूलीं ह्मणुनि मदनं देखुनि असें ।
 अहो याच्या भारें उदर लवले मोडिल खरें
 तिंठाई तो बांधे त्रिवळि लवलीवळिहि बरें ॥ ७४ ॥

हरक्रोधज्वालावलिभिरवलीढेन वपुषा
 गभीरे ते नाभीसरसि कृतसङ्गो मनसिजः ।
 समुत्तस्थौ तस्मादचलतनये धूमलतिका
 जनस्तां जानीते जननि तव रोमावलिरिति ॥७५॥

हरक्रोधाग्नीनें विमळ शरिरें सर्व तपलीं
 तुझ्या मांज्या दोन्ही ह्मणुनि मदनं झोंप त्यजिली ।
 उठे तेथें तों धूसरळलतिकारूप विलसे
 तिला जाणे चित्तीं सकळजन रोमावळि असें ॥ ७५ ॥

(१) ' बुहिनगिरिकन्ये ' इति पाठः.

यदेतत्कालिन्दीतनुतरतरङ्गाकृति शिवे
कृशे मध्ये किंचित्तव जननि यद्भाति सुधियाम् ।
विमर्दादन्योन्यं कुचकलशयोरन्तरगतं
तनूभूतं व्योम प्रविशदिव नाभीकुहरिणीम् ॥ ७६ ॥

कलिंदाकन्येचे कृशहि लहरीचैपरि दिसे
कटी जे कां काळें जननि बहु शोभा करितसे ।
विमर्दानें दोघे कुचकलश संकोचित उरीं
कृशत्वानें व्योम प्रविशत असे नाभिकुहरीं ॥ ७६ ॥

स्थिरो गङ्गावर्तः स्तनमुकुलरोमावलिलता
जलावालं कुण्डं कुसुमशरतेजोहुतभुजः ।
रतेर्लीलागारं किमपि तव नाभीति गिरिजे
विलद्वारं सिद्धेर्गिरिशनयनानां विजयते ॥ ७७ ॥

दिसे गंगेचा हा स्थगित भवरा वा स्तन कले
लतारोमाळीचे तळवटिक आले हिमकले ।
स्मराग्रीकुंडाचे परि रतिस लीलाघर असे
स्वभक्तांचे सिद्धी विळ किमु तुझी नाभिच दिसे ॥ ७७ ॥

(१) 'जननि तव तद्भाति' इति व्यस्तः पाठः.

निसर्गक्षीणस्य स्तनतटभरेण क्लमजुषो
 नमन्मूर्तेर्नाभौ वलिषु शनकैस्त्रुट्यत इव ।
 चिरं ते मध्यस्य त्रुटिततटिनी नीरतरुणा
 समावस्थः स्थेम्नो भवतु कुशलं शैलतनये ॥ ७८ ॥

स्वभावे जो क्षीण स्तनकठिणभारे श्रम जणों
 लवे नाभीमध्ये त्रिवलित हळू मोडल ह्मणों ।
 समावस्थेमध्यें परम जननी जो मज दिसे
 तया तूझ्या मध्यें बहु दिवस कल्याण निवसे ॥ ७८ ॥

कुचांवेतौ स्विद्यत्तटघटितकूर्पासभिदुरौ
 कषन्तौ दोर्मूले कनककलशाभौ कलयता ।
 अलं त्रातुं गङ्गातटमिव विलग्नं तनुभुवा
 त्रिधा नद्धं देवी त्रिवलि लवलीवल्लिभिरिव ॥ ७९ ॥

स्तनांच्या भारानें गुरु बहुत जों हास्य विलसे
 कटाक्षाचेठाई मदनवपु कादंब समजे ।
 तुझेठाई आंति स्तवन नह्मणे हा हर असे
 तुझ्या भक्तां तूझी प्रगटरूप ते मूर्ति विलसे ॥ ७९ ॥

(१) 'रुद्यत इव' इति पाठः. (२) 'सद्यः स्विद्य' इति पाठः.

गुरुत्वं विस्तारं क्षितिधरपतिः पार्वति निजां
नितम्बादाच्छिद्य त्वयि हरणरूपेण निन्दधौ ।
अतस्ते विस्तीर्णो गुरुरयमशेषां वसुमतीं
नितम्बप्राग्भागः स्थगयति लघुत्वं नयति च ॥८०॥

हिमाद्रीचें मोठेपण बहुत विस्तार जघनीं
तुझेठाईं आलें मज गमतसे सत्य जननी ।
शिवे त्यासाठीं हा गुरु बहुत विस्तीर्ण विलसे
समग्रा पृथ्वीतें स्थगित लघुभारें करितसे ॥ ८० ॥

करीन्द्राणां शुण्डा कनककदलीकाण्डपटली-
मुभाभ्यामूरुभ्यामुभयमपि निर्जित्य भवति ।
सुवृत्ताभ्यां पत्युः प्रणतिकठिनाभ्यां गिरिसुते
विजिग्ये जानुभ्यां विबुधकरिकुम्भद्वयमपि ॥८१॥

करीन्द्रांच्या सोंडा कनककदली हें द्वय बरें
तुझ्या मांड्या दोन्ही निपजति विजिंकोन चतुरें ।
तशा दोन्ही जानू विबुधगजकुंभांस जिणिती
नमस्कारें रुद्राप्रति कठिण जे वृत्त असती ॥ ८१ ॥

(१) 'दिनधे' इति पाठः. (२) 'भारः' इति पाठः.

पुरा जेतुं रुद्रं द्विगुणशरगर्भौ गिरिसुते
 निषङ्गौ ते जङ्घे विषमविशिखो गाढमकृत ।
 यदग्रे दृश्यन्ते दशशरफलाः पादयुगलं
 नखाग्रछद्मानः सुरमुकुटशाणौघनिशिताः ॥ ८२ ॥

शिवा जिंकायाला द्विगुणित शरें पंचविशिखें
 सुजंघा ते भाते भरुन मग तो शीघ्रहि निघे ।
 जयांच्या अग्रांतें दिसति शर पादांगुलिमिषें
 नखाग्रांच्या भाळीं सुरमुकुटशाणावरि तिखें ॥ ८२ ॥

श्रुतीनां मूर्धानो दधति तव यौ शेखरतया
 ममाप्येतौ मातः शिरसि दयया धेहि चरणौ ।
 ययोः पाद्यं पाथः पशुपतिजटाजूटतटिनी
 ययोर्लाक्षालक्ष्मीररुणहरिचूडामणिरुचिः ॥ ८३ ॥

शिरें वेदांचीं हे धरिति शिखरें ज्यास ह्मणुनी
 दयेनें तें माथां चरणकमळें ठेवि जननी ।
 जयाचें तें पाद्योदक पशुपती घे निजजटीं
 दिसे लाक्षालक्ष्मी अरुण बहु ते सूर्यनिकटीं ॥ ८३ ॥

(१) 'परा' इति पाठः. (२) 'गाढमकृत । यदग्रे लक्ष्यन्ते.'

नमोवाकं ब्रूमो नयनरमणीयाय पदयो-
स्तवास्यै द्वन्द्वाय स्फुटरुचिरसालक्तकवते ।
असूयत्यत्यन्तं यदभिहननाय स्पृहयते
पशूनामीशानः प्रमदवनकङ्कलितरवे ॥ ८४ ॥

तुझ्या दोन्ही पायां नमन तरिं साष्टांग करितों
दिसे जेथें अंबे प्रगटरुचि आलक्त रमतो ।
करी ईर्ष्या ज्याची प्रमदवनकंकलितरु हा
जयातें वंदाया पशुपति करीतो स्पृहरुहा ॥ ८४ ॥

मृषा कृत्वा गोत्रस्खलनमथ वैलक्ष्यनमितं
ललाटे भर्तारं चरणकर्मले नाटयति ते ।
चिरादन्तः शल्यं दहनकृतमुन्मीलितवता
तुलाकोटिकाणैः किलिकिलितमीशानरिपुणा ८५

मृषा केलें गोत्रस्खलन ह्मणुं संलज्ज असतां
स्वभर्ताराभाळीं चरणयुगळें तूं प्रहरितां ।
तुला कोटीशब्दीं जयजय करी मन्मथ कसा
दिसां कित्येकांचें दहनकृतशल्येंविण जसा ॥ ८५ ॥

(१) ' युगले ' इति पाठः.

हिमानीहन्तव्यं हिमगिरितटाक्रान्तरुचिरौ
 निशायां निद्राणं निशि च परभागे च विशदौ ।
 परं लक्ष्मीपात्रं श्रियमतिदिशन्तौ सुयमिनः
 सरोजं त्वत्पादौ जननि जयतश्चित्रमिह किम् ॥ ८६ ॥

हिमानें जें वाळे हिमगिरितटीं जेविं चरती
 निजे रात्रीमध्ये दिननिशिस जे स्वच्छ असती ।
 वसे लक्ष्मी जेथें श्रियनिजजनां देति तारि कां
 सरोजातें जिकी तव चरण आश्रिय गमकां ॥ ८६ ॥

पदं ते कान्तीनां प्रपदमपदं देवि विपदां
 कथं नीतं सद्भिः कठिनकमठीखर्परतुलाम् ।
 कथं वा हस्ताभ्यामुपनयनकाले पुरभिदा
 यदादाय न्यस्तं दृषदि दयमानेन मनसा ॥ ८७ ॥

वसे कांती जेथें विपद तरि नापद्मकमळा
 कसी द्यावी त्याला कठिनकमठीखापरतुला ।
 विवाहाचे काळीं धरुन निजहातें पुरहरे
 दयेनें जें पाठ्यावर बसविलें सुंदर वरें ॥ ८७ ॥

(१) 'क्रान्तिचतुरौ'. (२) 'मपि सृजन्ती सुमयिनां'.

नखैर्नागस्त्रीणां करकमलसंकोचशशिभि-
स्तरूणां दिव्यानां हसत इव ते चण्डि चरणौ ।
फलानि स्वस्थेभ्यः किसलयकराग्रेण ददतां
दरिद्रेभ्यो भद्रां श्रियमनिशमहाय ददतौ ॥ ८८ ॥

नखाहीं हांसे ती चरणकमळें दिव्य तरुला
जयाच्या सामर्थ्या वदति अवघ्या स्वर्गअवला ।
तरू देती स्वस्था फलकिसलयाग्रेचि करणी
हरी इंद्रा लक्ष्मी प्रतिदिवसिं संप्राप्त चरणीं ॥ ८८ ॥

कदा काले मातः कथय कलितालक्तकरसं
पिवेयं विद्यार्थी तव चरणनिर्णेजनजलम् ।
प्रकृत्या मूकानामपि च कविताकारणतया
यदादत्ते वाणी मुखकमलताम्बूलरसताम् ॥ ८९ ॥

तुझे पाई आलक्तकरस असे तोचि धुवुनी
कधीं मी विद्यार्थी पिडून जळ तें सांग जननी ।
स्वभावे मूकेही वदति धरिती शक्तिकविता
प्रसादे तीर्थाच्या मुखकमळि तांबूल रसता ॥ ८९ ॥

(१) ' नाक ' इति पाठः.

पदन्यासक्रीडापरिचयमिवादांतुमनस-
 श्ररन्त्यास्ते खेलं भवनकलहंसा न जहति ।
 शुचिक्षेपे शिक्षां सुभगमणिमञ्जीररणित-
 च्छलादाचक्षाणं चरणयुगलं चारुचलिते ॥ ९० ॥

शिवे खेळायाला भवनिं कलहंसें विचरती
 तुझ्या मार्गे येती पदठिवणि त्याला न त्यजिती ।
 भवानी मंजीरध्वनि उठतसे पाय चलतां
 मिसें त्या हंशाला जन शिकविसी पाय ठिवितां ॥ ९० ॥

ददांने दीनेभ्यः श्रियमनिशमीशानुसदृशी-
 ममन्दं सौन्दर्यं स्तवकमकरन्दं विकिरति ।
 तवास्मिन्मन्दारस्तवकसुभगे यातु चरणे
 निमज्जन्मज्जीवः करणचरणैः षट्चरणताम् ॥ ९१ ॥

(१) 'मिवारब्धुमन' इति पाठः. (२) 'चरणकमलं' इति पाठः.
 (३) अस्य पद्यस्य समर्थोकी नोपलभ्यते.

अराला केशेषु प्रकृतिसरला मन्दहसिता
शिरीषाभा गात्रे दृषदिव कठोरा कुचतटे ।
भृशं तन्वी मध्ये पृथुरसि वरारोहविषये
जगत्रातुं शंभोर्जयति करुणा काचिदरुणा ॥ ९२ ॥

अराला जे केशीं सरल मृदुहास्यें कृश कटी
शिरीषाची शोभा शरिरिं कठिणा जे कुचतटीं ।
पुरोभागीं मोठी जगतिकलनी शंभुकरुणा
वसे सर्वोत्कर्षीं भगवति शिवे काचिदरुणा ॥ ९२ ॥

पुरारातेरन्तःपुरमसि ततस्त्वच्चरणयोः
सपर्या मर्यादा तरलकरुणानामसुलभा ।
तथा ह्येते नीताः शतमुखमुखाः सिद्धिमनुलां
तव द्वारोपान्तस्थितिभिरणिमाद्याभिरमराः ॥ ९३ ॥

पुरारीचें अंतःपुर अससि तूं वो भगवती
तुझे पायीं पूजा तरलकरुणाला न घडती ।
तन्ही सिद्धी नेले विधिशतमखादीक सुरही
तुझ्या दारापार्शीं वसति अणिमादौविदलही ॥ ९३ ॥

(१) 'रपि' इति पाठः.

गतास्ते मञ्चत्वं द्रुहिणहरिरुद्रेश्वरभृतः
 शिवः स्वच्छछायाकपटघटितप्रच्छदपटः ।
 त्वदीयानां भासां प्रतिफलनरांगारुणतया
 शरीरे शृङ्गारो रस इव दशां दोग्धि कुतुकम् ९४

पलंगाचे माचे द्रुहिणहरिही ईश्वर तुझे
 शिवे स्वच्छ च्छाया प्रगट करुनी गुप्त विलसे ।
 शरीराच्या कांती अरुण बहु लाक्षारस जसा
 तयानें तो भासे सकल तव शृंगार सहसा ॥ ९४ ॥

कलङ्कः कस्तूरी रजनिकरबिम्बं जलमयं
 कलाभिः कर्पूरैर्मरकतकरण्डं निबिडितम् ।
 अतस्त्वद्भोगेन प्रतिदिनमिदं रिक्तकुहरं
 विधिर्भूयोभूयो निबिडयति नूनं तव कृते ॥ ९५ ॥

कलंकी कस्तूरी मरकतकरंडा शशि असे
 कला कर्पूराही सहजगति जो पूर्ण विलसे ।
 सरे नित्यत्वेसीं त्वदिय उपभोगास्तव रिता
 मला वाटे त्याही विधि पुनरपी होय भरिता ॥ ९५ ॥

(१) 'घटितकपट' इति पाठः. (२) 'लाक्षारुण' इति पाठः.

स्वदेहोद्भूताभिर्घृणिभिरणिमाद्याभिरभितो
निषेव्ये नित्यं त्वामहमिति सदा भावयति यः ।
किमाश्चर्यं तस्य त्रिनयनसमृद्धिं तृणयतो
महासंवर्तान्निर्विरचयति नीराजनविधिम् ॥ ९६ ॥

शरीराचे तूझ्या किरणिं अणिमाद्यादि वसल्या
असी जोही ध्यातो करिल हरलक्ष्मी तृणतुला ।
यदर्थी तो अंवे किमपि तरि आश्चर्यहि नसे
तयातें संवर्ती अनळ सुखि ओवाळित असे ॥ ९६ ॥

समुद्भूतस्थूलस्तनभरमुरश्चारुहसितं
कटाक्षे कंदर्पः कतिचन कदम्बद्युतिवपुः ।
हरस्य त्वद्भ्रान्तिं मनसि जनयन्तः सुवदने
भवत्या ये भक्ताः परिणतिरमीषाभियमुमे ॥ ९७ ॥

स्तनांच्या भारानें गुरु बहुत जें हास्य विलसे
कटाक्षांचे ठाईं मदन वपु कादव समजे ।
तुझेठाईं भ्रांतीस्तव जन ह्मणे हा हर असे
तुझ्या भक्तां तूझी प्रगटरुप ते मूर्ति विलसे ॥ ९७ ॥

(१) 'यन्ति स्म विमला' इति पाठः.

कलत्रं वैधात्रं कतिकति भजन्ते न कवयः
 श्रियो देव्याः को वा न भवति पतिः कैरपि धनैः ।
 महादेवं हित्वा तव सति सतीनामचरमे
 कुचाभ्यामाश्लेषः कुरवकतरोरप्यसुलभः ॥ ९८ ॥

विधीचे पत्नीतें कविजनहि कित्येक भजती
 धनाहीं लक्ष्मीचा पति बहुत ऐसे ह्मणविती ।
 महादेवावांचूनहि तव कुचाभोगहि शिवे
 महापातिव्रत्यें कुरवकतरू तोहि नपवे ॥ ९८ ॥

गिरं देवीमाहुर्दुहिणगृहिणीमागमविदो
 हरेः पत्नीं पद्मां हरसहचरीमद्रितनयाम् ।
 तुरीया कापि त्वं दुरधिगमनिःसीममहिमा
 महामाये विश्वं भ्रमयसि परब्रह्ममहिषि ॥ ९९ ॥

विधात्याची पत्नी निपुणतर वाणी च ह्मणती
 हरीची तों लक्ष्मी हरसहचरी पार्वति सती ।
 तुरीया तूं अंवे अससिल परब्रह्ममहिषी
 महामाये विश्वादिक सकळ जें हें भ्रमविसी ॥ ९९ ॥

(१) 'भ्यामाश्लेषः' इति पाठः. (२) 'गिरामाहुर्देवीं दुहिण'
 इति पाठः.

सरस्वत्या लक्ष्म्या विधिहरिसपत्नी विजयते
रतेः पातिव्रत्यं शिथिलयति रम्येण वपुषा ।
चिरंजीवन्नेव क्षपितपशुपाशव्यतिकरः
परब्रह्माभिख्यं रसयति रसं त्वद्भजनवान् ॥ १०० ॥

शिवे त्वद्भक्तीने विधिहरिकलत्रासि जिणि जो
परब्रह्माचा जो रसपति असे दिव्यतनु तो ।
जयाते देखोनी सकळ चलतो दिव्य वनिता
विधीकन्या लक्ष्मी रतिहि त्यजिती त्या पतिव्रता ॥ १०० ॥

निधे नित्यस्मेरे निरवधिगुणे नीतिनिपुणे
निराकारज्ञाने नियमपरचित्तैकनिलये ।
नियत्या निर्मुक्ते निखिलनिगमान्तस्तुतिपदे
निरातङ्के नित्ये निगमय ममापि स्तुतिमिमाम् १०१

भवानी शर्वाणी हिमगिरिसुते तूं भगवती
असीं नावें लोकीं सुजनजन कित्येक ह्मणती ।
मन्हाष्ट्री भाषेनें स्तुति तुझिच म्यां जेविं रचिली
अपर्णे स्वीं कर्णी श्रवण करिं ते सौख्यलहरी ॥ १ ॥

(१) 'घाटज्ञाने' इति पाठः.

प्रदीपज्वालाभिर्दिवसकरनीराजनविधिः
 सुधा सूतेश्चन्द्रोपलजललवैरर्घ्यरचना ।
 स्वकीयैरम्भोभिः सलिलनिधिसौहित्यकरणं
 त्वं दीयाभिर्वाग्भिस्तव जननि वाचां स्तुतिरियम् ॥२॥

दिव्याच्या ज्योतीनें उजळण जसें होय रविसी
 शशीचें घेऊनी अमृतकरि पूजा नवरसीं ।
 समुद्राची तृप्ती उदक तरि तेथीलच जसें
 तुझाज्ञेनें वाचेंकरुन वदलों मी स्तुति असें ॥ २ ॥

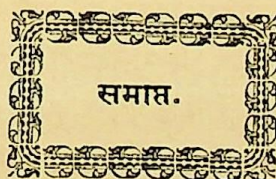
सोळासोळाशकांकीं शक तरि गणिजे जो असे पैठणींचा
 भावासंवत्सरींचा सुदिवस दसरा वार भूमीसुताचा ।
 केली हे त्यादिशीं म्या तरि सुखलहरी जे महाराष्ट्रभाषा
 श्रोते हो आयकावें कवि वसत असे आपुल्या तो स्वदेशा ॥ १ ॥

साठिपिंपळांवा उत्तम नाम ज्यासहि तें असे
 पापनाशक गौतमीतटिं उत्तरे तिरिं जे वसे ।
 दंडकारण लोकसज्जन अंवाडातळिं वोढते
 ज्योतिषि द्विज फार ते स्थाळिं सामगायन बोलते ॥२॥

(१) 'स्वकीयाभि' इति पाठः.

गोविंदपोळकवि ते स्थाळि राहताहे
 अंवे कृपेस्तव असे मति कीं जयाहे ।
 आनंदसौख्यलहरी स्तुति नाम लेखा
 पंचोत्तराधिकशतेकृति पद्यसंख्या ॥ ३ ॥

इति श्रीमत्पदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणश्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य
 वर्य श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं सौन्दर्यलहरीस्तोत्रं संपूर्णम् ।



विक्रीस तयार.

संस्कृत पुस्तकें.

| | कि० | ट० |
|--|------|-----|
| अष्टाध्यायीसूत्रपाठ | १- | ८॥ |
| अनर्घराघव नाटक | २ | ८॥ |
| अन्नभट्टकृत तर्कसंग्रह व दीपिका | १= | ८- |
| अवधूतगीता (साधी) | ८=॥ | ८॥ |
| अवधूतगीता (रेशमी पुट्याची) | १- | ८॥ |
| आर्यासप्तशती | १॥ | ८= |
| इसावनीतिकथा (दोन भाग) प्रत्येकीं | १= | ८॥ |
| उदासीनसाधुस्तोत्र | १- | ८- |
| कर्णसुन्दरी | ११० | ८- |
| कथासरित्सागर | ६ | ११० |
| कर्पूरमञ्जरी आणि बालभारत नाटक | १ | ८-॥ |
| कादम्बरीकथासार | ११० | ८- |
| कालिदासकृत रघुवंश काव्य | २ | ८=॥ |
| कालिदासकृत रघुवंश काव्य बारीक टैपांत | १ | ८= |
| कालिदासकृत कुमारसंभव काव्य मल्लिनाथकृत टीका (सर्ग १-८) व सीतारामकृत टीका (सर्ग ८-१७ व पाठान्तरे यांसहित | २ | ८=॥ |
| कालिदासकृत मेघदूत काव्य मल्लिनाथकृत टीका | ११० | ८- |
| कालिदासकृत मेघदूत काव्य मल्लिनाथकृत टीका, पाठान्तरे व अर्थप्रदर्शक इंग्रजी टिप्पणी यांसहित | १११० | ८= |
| कालिदासकृत अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक राघवभट्ट टीका, बारीक टैपाचा | ११ | ८-॥ |
| कालि० अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक इंग्रजी टिपा यांसहित | २ | ८=॥ |

| | | | | कि० | ट० |
|---|-----|-----|-----|-----|-----|
| कालिदासकृत ऋतुसंहार काव्य मणिरामकृत टीका, पा- टान्तरें व अर्थप्रदर्शक इंग्रजी टिप्पणी यांसहित; | | | | | |
| व शङ्करातिलक काव्य | ... | ... | ... | १२ | ८१ |
| केवळ टीकेसहित | ... | ... | ... | १० | ८१ |
| काव्यालंकार रुद्रटकृत नमिसाधुकृत टीकेसहित | ... | ... | ... | १॥ | ८२ |
| कंसवध नाटक शेषकृष्णकृत | ... | ... | ... | १॥ | ८१ |
| कृष्णसहस्रनाम | ... | ... | ... | ८२ | ८॥ |
| गणपतिस्तोत्र | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| गणेशसहस्रनामावळी | ... | ... | ... | ८१॥ | ८॥ |
| गणेशगीता (साधी) | ... | ... | ... | ८२१ | ८१ |
| „ (रेशमी पुढ्याची) | ... | ... | ... | ११ | ८१ |
| गीता मोठ्या टैपानीं छापलेली | ... | ... | ... | १ | ८१॥ |
| गोपालसहस्रनाम (रेशमी पुढ्याचें) | ... | ... | ... | ११॥ | ८॥ |
| गोपालसहस्रनाम (साधें) | ... | ... | ... | ८२१ | ८॥ |
| चतुःश्लोकी भागवत | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| तुळसीमहात्म्य | ... | ... | ... | ८॥ | ८॥ |
| दण्डिकृत दशकुमारचरित्र | ... | ... | ... | १॥ | ८२ |
| दत्तात्रयनामावळी | ... | ... | ... | ८२ | ८॥ |
| दुर्गास्तोत्र | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| देवीसहस्रनामावळी | ... | ... | ... | ८१॥ | ८॥ |
| द्वादशस्तोत्र | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| शंकरानन्दीगीता | ... | ... | ... | ५ | १॥ |
| पंचरत्नगीता मध्यम टैपानी छापलेली (साधी) | ... | ... | ... | १२ | ८१ |
| „ (रेशमी पुढ्याची) | ... | ... | ... | १॥ | ८१ |
| हीं पुस्तकें मुंबईत काळकादेवीच्या रस्त्यावर “ निर्णयसागर ” छाप- खान्यांत रोख पैसे पाठविले असतां विकत मिळतील. | | | | | |

| | | | | कि० | रु० |
|--|-----|-----|-----|------|------|
| रत्नसमुच्चय | ... | ... | ... | ८२ | ८॥ |
| रसगङ्गाधर | ... | ... | ... | ३॥ | ८२ |
| रसिकाष्टक | ... | ... | ... | ८॥ | ८॥ |
| रामगीता मूळ | ... | ... | ... | ८॥॥ | ८॥ |
| रामचंद्रिका नांवाची संस्कृत शब्दरूपावलि... | ... | ... | ... | १० | ८॥ |
| रामरक्षा... | ... | ... | ... | ८॥ | ८॥ |
| रामस्तवराज. | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| लघुयोगवासिष्ठ | ... | ... | ... | ५ | १॥० |
| लघुकौमुदी | ... | ... | ... | १० | ८१ |
| लक्ष्मीस्तोत्र | ... | ... | ... | ८॥ | ८॥ |
| लौगाक्षिभास्करविरचित तर्ककौमुदी | ... | ... | ... | ८२ | ८॥ |
| वाल्मीकिरामायण सटीक | ... | ... | ... | ८ | १॥॥२ |
| विक्रमोर्वशी नाटक | ... | ... | ... | १॥॥० | ८१ |
| विदुरनीति | ... | ... | ... | १२ | ८॥ |
| विद्यारण्य स्वामीकृत अनुभूतिप्रकाश | ... | ... | ... | २१ | ८२ |
| विष्णुसहस्रनाम. (साधे.) | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| ” (रेशमी.) | ... | ... | ... | ८२॥ | ८॥ |
| विष्णुसहस्रनामावळी. (साधी.) | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| ” (रेशमी.) | ... | ... | ... | ८२॥ | ८॥ |
| वैदिककोश | ... | ... | ... | १॥० | ८१ |
| वैराग्यशतक | ... | ... | ... | १०॥ | ८॥ |
| शब्दरूपावली | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| शिवसहस्रनामावळी. (रेशमी.) | ... | ... | ... | ८२ | ८॥ |
| ” (साधी.) | ... | ... | ... | ८१॥ | ८॥ |
| शिवगीता. (साधी) | ... | ... | ... | १०१ | ८१ |

| | | | | कि० | ट० |
|-------------------------------------|-----|-----|-----|------|-----|
| शिवगीता (रेशमी) | ... | ... | ... | १२१ | ८१ |
| शिवतांडवस्तोत्र | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| शिवकवच | ... | ... | ... | ८॥॥ | ८॥ |
| शिवमहिम्न स्तोत्र | ... | ... | ... | ८॥॥ | ८॥ |
| शिवापराधक्षमापन स्तोत्र | ... | ... | ... | ८॥ | ८॥ |
| शिशुपालवध. (माघकाव्य) सटीक | ... | ... | ... | ८॥ | १० |
| शङ्कराशतक | ... | ... | ... | ८३॥ | ८॥ |
| श्रीमद्भगवद्गीता बारीक टाईपांची | ... | ... | ... | ११ | ८॥ |
| श्रीहर्षकृत रत्नावली नाटिका | ... | ... | ... | १२ | ८॥ |
| श्रीहर्षकृत प्रियदर्शिका नाटिका | ... | ... | ... | ११० | ८१॥ |
| सटीक कुवलयानंदकारिका | ... | ... | ... | १११० | ८२ |
| सटीक शिवगीता | ... | ... | ... | १ | ८२ |
| सत्यनारायण | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| सप्तशती प्रयोगांसहित बारीक टाईपांची | ... | ... | ... | ११ | ८॥ |
| सप्तशती मोठ्या टाईपांची | ... | ... | ... | १ | ८२ |
| सप्तशती. सुटी प्रत | ... | ... | ... | १११० | ८२ |
| समयमातृका | ... | ... | ... | ११० | ८१ |
| समासचक्र | ... | ... | ... | ८॥॥ | ८॥ |
| सर्वपूजा... | ... | ... | ... | ८१ | ८॥ |
| सिद्धांतकौमुदी. मध्यम टैपाची | ... | ... | ... | २॥ | १० |
| ” बारीक ” | ... | ... | ... | २ | १० |
| सुभद्राहरणम् | ... | ... | ... | १० | ८॥ |
| सुभाषितरत्नभाण्डागार | ... | ... | ... | ३॥ | ११ |
| सूर्यसहस्रनामावली. (रेशमी)... | ... | ... | ... | ८३ | ८॥ |
| सूर्यसहस्रनामावली. (साधी)... | ... | ... | ... | ८१॥ | ८॥ |

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी

R546,SN2C V.2



1890



गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

पुस्तक लौटाने की तिथि अन्त में अङ्कित
है। इस तिथि को पुस्तक न लौटाने पर छै
नये पैसे प्रति पुस्तक अतिरिक्त दिनों का
अर्थदण्ड लगेगा।

19 JAN 1981

26 NOV 1983

K-8615

१००००.६.५६।

ARCHIVES DATA BASE
2011 - 12

18906
—
77

पुस्तकालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार ।

3